Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 8, pp 680-681, August, 2026

भाग्यवती उपन्यास में स्त्री-जीवन और सामाजिक सरोकार

कु आकांक्षा बाजपेई

शोधार्थी

डॉ. बी.आर. अंबेडकर विश्विद्यालय, दिल्ली

संर्पक : 8130330160

सार -

'भाग्यवती' उपन्यास हिन्दी के आरंभिक उपन्यासों में से एक है। यह उपन्यास स्त्री-शिक्षा के साथ-साथ स्त्री जीवन से जुड़ी विभिन्न समस्याओं को भी सामने लाता है। हिंदी उपन्यास की विकास-यात्रा को समझने के साथ ही स्त्री की एक मुकम्मल छवि तथा उपन्यासों में स्त्री के विविध संदर्भों को समझने की दृष्टि से 'भाग्यवती' एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में सामने आता है। इसके साथ ही, उन्नीसवीं शताब्दी में स्त्री-शिक्षा के लिए किए जा रहे प्रयासों को भी यह उपन्यास विस्तारपूर्वक प्रस्तुत करता है। भाग्यवती उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र भाग्यवती स्त्री जीवन की एक आदर्श छवि प्रस्तुत करती है। परिवार में एक स्त्री को किस रूप में अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए और विपरीत परिस्थितियों में भी उसे किस प्रकार से उनका सामना करना चाहिए, इन सभी बातों पर यह उपन्यास प्रकाश डालता है। आरंभिक दौर के उपन्यासों का स्त्री-सरोकार समझने के दृष्टि से 'भाग्यवती' एक महत्वपूर्ण उपन्यास है।

बीज शब्द- स्त्री शिक्षा, उपन्यास विधा, समाज-सुधार, आदर्श छवि, हिन्दी नवजागरण, बाल विवाह, विधवा विवाह, स्त्री जीवन, स्त्री की सामाजिक स्थिति, पति-पत्नी संबंध, उन्नीसवीं शताब्दी।

मूल आलेख -

भाग्यवती उपन्यास पंडित श्रद्धाराम फिल्लौरी कृत हिंदी के आरंभिक दौर का उपन्यास है। स्त्री शिक्षा और समाज सुधार पर आधारित हिंदी का पहला उल्लेखनीय सामाजिक उपन्यास माना जाता है। उपन्यास में स्त्री शिक्षा का समर्थन किया गया है। साथ स्त्री की एक आदर्श छवि के निर्माण का भी प्रयास हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतीय समाज के भीतर नवजागरण की चेतना के कारण स्त्री-जीवन से संबंधित विविध समस्याओं को समाज सुधारक उठा रहे थे। स्त्रियों की शिक्षा, विधवा-पुनर्विवाह का समर्थन, बाल-विवाह का विरोध आदि विषय उक्त सुधारों के केंद्र में थे। हिंदी उपन्यास के विकास का समय भी इसी कालखंड को स्वीकार किया जाता है। फलस्वरूप आरम्भिक हिंदी उपन्यासकार नवजागरण से प्रभावित दिखाई देते हैं। वे स्त्री जीवन को आधार बनाकर उपन्यास लेखन करते हैं। अधिकांश आरंभिक उपन्यास किसी न किसी रूप में स्त्री जीवन से संबंधित हैं। ज्यादातर आरंभिक उपन्यासकार अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री शिक्षा को लेकर समाज में जागरूकता फैलाने का कार्य कर रहे थे।

हिन्दी उपन्यास में जो स्त्री केंद्रित उपन्यासों की जो परंपरा चली उसमें श्रद्धाराम फिल्लौरी द्वारा रचित भाग्यवती उपन्यास का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इससे पूर्व 'देवरानी जेठानी की कहानी' और 'वामा शिक्षक' जैसे स्त्री शिक्षा संबंधी उपन्यास लिखे जा चुके थे। "भाग्यवती में 1870 ई. के दशक के समाज का चित्रण देवरानी जेठानी की कहानी अथवा वामा शिक्षक की अपेक्षा अधिक विशेष रूप से मिलता है।"[1] हिंदी के प्रथम उपन्यास को लेकर 'भाग्यवती' और लाला श्रीनिवास दास के 'परीक्षा गुरु' के बीच साहित्यिक बहस भी रही है, लेकिन इस बात पर पर्याप्त सहमति है कि 'भाग्यवती' हिंदी के आरंभिक सामाजिक-सुधारवादी उपन्यासों में एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र भाग्यवती के माध्यम से भारतीय स्त्री की एक आदर्श छवि निर्मित करने का प्रयास किया है। आलोचक गोपाल राय के शब्दों में 'भाग्यवती' का महत्त्व केवल इस कारण नहीं है कि यह हिंदी उपन्यास की आरंभिक रचनाओं में से एक है, बल्कि इसलिए भी है कि जिस समय स्त्रियों की शिक्षा, विधवा-विवाह, बाल-विवाह और स्त्री-पुरुष समानता जैसे प्रश्न समाज में गहरे विवाद के विषय थे, उस समय इस उपन्यास ने इन मुद्दों को कथा के केंद्र में रखा। इसे भारतीय स्त्रियों में जागृति पैदा करने की दृष्टि से लिखा गया था। उपन्यास में बाल-विवाह का विरोध, विधवा-विवाह का समर्थन, स्त्री-शिक्षा के महत्त्व पर जोर दिया। जिस कारण से यह उस दौर के प्रमुख उपन्यासों में गिना जाता है। हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा और उपन्यास में स्त्रियों की उपस्थिति के प्रस्थान बिन्दु के रूप में भी यह उपन्यास काफी अहम भूमिका के रूप में दिखाई पड़ता है।

'भाग्यवती' को केवल उन्नीसवीं शताब्दी की सामाजिक परिस्थितियों का दस्तावेज मानना पर्याप्त नहीं होगा। यह ऐसी रचना है जो हमें यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि सामाजिक सुधार केवल कानून बनाने से नहीं होता, बल्कि परिवार, शिक्षा, मानसिकता और सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन से होता है। आज जब भारत में महिलाओं की शिक्षा और अधिकारों के क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई है, तब भी लैंगिक असमानता, बाल-विवाह, दहेज, घरेलू हिंसा, शिक्षा में असमान अवसर और स्त्री की स्वतंत्रता को लेकर अनेक समस्याएँ मौजूद हैं। इसलिए आरंभिक दौर की रचना होने के कारण यह आज भी प्रासंगिक दिखाई देती है।

'भाग्यवती' की सबसे बड़ी विशेषता उसका सामाजिक-सुधारवादी उद्देश्य है। उन्नीसवीं शताब्दी का भारतीय समाज अनेक रूढ़ियों और परंपराओं से घिरा हुआ था। स्त्री का जीवन मुख्यतः परिवार और घरेलू भूमिकाओं तक सीमित माना जाता था। उस समय के समाज में बाल-विवाह की प्रथा प्रचलित थी, विधवाओं के पुनर्विवाह को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नहीं थी और स्त्रियों की शिक्षा को लेकर भी अनेक प्रकार की आशंकाएँ थीं। इन्हीं

[1] ज्ञानचन्द्र जैन, प्रेमचंद-पूर्व के हिन्दी उपन्यास, आर्य प्रकाशन मंडल, संस्करण-1998, पृ. 55

आशंकों के निवारण हेतु उस समय के उपन्यासों में स्त्री संबंधित सभी समस्याओं को रेखांकित करने का प्रयास किया। इन सब बातों का जिक्र लेखक श्रद्धाराम फिल्लौरी उपन्यास की भूमिका में करते हैं- "बहुत दिनों से इच्छा थी कि कोई ऐसी पोथी हिन्दी भाषा में लिखूँ कि जिसके पढ़ने से भारतखण्ड की स्त्रियों को गृहस्थ धर्म की शिक्षा प्राप्त हो"[2] इस प्रकार यह उपन्यास स्त्री शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण विषय को केंद्र में रख कर स्त्री जीवन से संबंधित अन्य समस्याओं को लेकर भी बात करता है। आलोचक गोपाल राय भाग्यवती के संबंध में लिखते हैं कि- "भाग्यवती के कथ्य में भी कोई नवीनता नहीं है। इसमें भी हिन्दू समाज की बुराइयों, जैसे बाल-विवाह, भूतप्रेत और ओझा-सयानों में विश्वास, बच्चों को टीका ण लगवाने, उन्हें जेवर पहनाने, लड़कियों को शिक्षा न देने, शादी-ब्याह के अवसर पर अपव्यय करने, आदि की आलोचना की गई है। भाग्यवती में अंधविश्वासों की सूची में थोड़ी वृद्धि हो गई है; जैसे विवाह के समय चील का पूजन, कीकर वृक्ष की मनौती, बकरे का कान चीर कर विवाह के समय चील का पूजन, कीकर वृक्ष की मनौती, बकरे का कान चीर कर विवाह की वेदी पर बैठना, पुराने जूते को सिर झुकाना, सूप पर पाँव रखकर घर में प्रवेश करना, कल्लू पीर के आगे सिर झुकाना, माथे पर बेसन का टीका लगाना आदि।"[3]

'भाग्यवती' उपन्यास में सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न स्त्री शिक्षा को लेकर ही उठाया गया है। भाग्यवती के पिता स्त्री शिक्षा को बेहद आवश्यक मानते हैं। शिक्षा के महत्व को बताते हुए वे एक जगह बोलते हैं- "मेरी समझ में वो लोग बड़े मूर्ख हैं जो अप ने लड़के-लड़की को विद्या से हीन रखते हैं। विद्या एक ऐसा अभ्यास है कि उससे मन को कभी अवसर नहीं मिलता कि और किसी प्रकार में प्रवृत्त हो सके।"[4] इसके साथ ही भाग्यवती की माँ भी उसकी शिक्षा को लेकर जागरूक दिखाई देती है। भाषा व्याकरण, ऋतुपाठ, हितोपदेश, शिक्षा मंजरी, भूगोल विज्ञान, गणित आदि के साथ साथ वह भाग्यवती को गृहकार्य, पाककला आदि की भी शिक्षा देती हैं। पुस्तक ज्ञान के साथ साथ गृह कार्य की भी शिक्षा देने पर भी ज़ोर दिया जा रहा था। जिस दौर में यह उपन्यास लिखा जा रहा था उस समय स्त्रियों का घर से बाहर जा कर काम करना सामान्य घटना नहीं थी। अमूमन स्त्रियाँ घर में रह कर ही घरेलू कार्य किया करती थी। कठिन परिस्थियों में ही वे घर पर ही रह कर कोई छोटा-मोटा व्यवसाय किया करती थी। इसलिए उन्हें शिक्षा और घरेलू कार्य के साथ-साथ किसी कला में पारंगन्त होने की भी शिक्षा दी जाती थी, ताकि वे कठिन परिस्थियों में अपना जीवनयापन कर सकें। इस उपन्यास में भाग्यवती के जीवन में भी ऐसी परिस्थिति बनती है कि उसकें ससुराल वाले उसे घर से निकाल देते है, और वह बेसहरा हो जाती है उस समय उसके पास जीवनयापन करने के लिए कुछ भी नहीं होता है। ऐसी स्थिति में वह अपने विवेक और धैर्य का परिचय देते हुए अपने ज्ञान का उपयोग कर इस कठिन परिस्थिति का सामना करती है। और बिना किसी के सहयोग के अपना जीवनयापन करती है। सिलाई कढ़ाई का काम करके वह अपने गुजारा करती है। विद्या के बल पर ही वह इन परिस्थितियों का मुकाबला कर पाती है।

" विद्या बंधु विदेश में, विद्या विपत सहाय ।
जो नारी विद्यावती, सो कैसे दुःख पाय ।।
राज भाग सुखरूप धन, विपत समय तब जाँह ।
इक विद्या विपदा समय, तजे न नर की बाँह ।।[5]

इस तरह के कई उदाहरण हमें इस उपन्यास मे देखने को मिलते है जो स्त्री शिक्षा की उपयोगिता और आवश्यकता को लेकर सजग दिखाई पड़ते हैं। साथ ही उस समय के लोग स्त्री शिक्षा को लेकर जागरूक नहीं थे, वे अपनी लड़कियों को घर से बाहर भेज कर शिक्षित करने में सहज नहीं थे। इसलिए स्त्रियों को घर पर ही रह कर विविध विषयों के साथ साथ घर के कामों को कुशलता से करने की शिक्षा दी जाती थी।

जिस समय में यह उपन्यास लिखा गया वह दौर संक्रमणकालीन दौर था। उस समय में स्त्री सुधार के कई आंदोलन विभिन्न समाज-सुधारकों द्वारा चलाए जा रहे थे, अनेक संस्थाएं इस सुधारों में बढ़चढ़ कर हिस्सा ले रही थी। उपन्यासों में भी उसका प्रभाव दिखाई पढ़ रहा है, परंतु उसकी भी कुछ सीमाएँ थी। उपन्यासकार खुल कर उन समस्याओं का जिक्र उपन्यास में करने से बचते दिखाई देते है जिसके कई राजनीतिक कारण मौजूद थे, परंतु फिर भी स्त्री जीवन की समस्याओं का थोड़ा-बहुत जिक्र वे इन उपन्यासों में कर रहे थे। उस समय में बाल विवाह की समस्या बहुत ही व्यापक रूप में समाज में व्याप्त थी। यह उपन्यास बाल विवाह को समस्या की ओर भी पाठकों का ध्यान केंद्रित करने का थोड़ा-बहुत प्रयास करता है। लड़कियों का विवाह उस समय बहुत ही छोटी उम्र में कर दिया जाता था, जिसके कारण छोटी सी उम्र में ही उन्हें बहुत सारी स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता था। भाग्यवती के पिता भाग्यवती का विवाह छोटी उम्र में न करने का फैसला लेते है और भाग्यवती के थोड़ा सयानी होने के बाद ही उसका विवाह करने का फैसला लेते हैं। "हम लड़की का विवाह ग्यारह वर्ष से पहले होना कभी श्रेष्ठ नहीं कहेंगे। जब हमने बालक का विवाह अठारह वर्ष पर ठहराया तो लड़की ग्यारह वर्ष से छोटी कब ब्याही जा सकती है?[6] भाग्यवती के पिता उमादत्त विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से बाल-विवाह का विरोध करते है। इस प्रकार यह उपन्यास बाल-विवाह जैसी कुरीतियों पर खुल कर अपनी बात रखने का प्रयास करता है। इसी प्रकार यह उपन्यास स्त्री जीवन से संबंधित अन्य समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करने का प्रयास करता है।

भाग्यवती उपन्यास स्त्री समस्याओं की ओर ध्यान केंद्रित करने के साथ साथ स्त्री की एक आदर्श छवि निर्मित करने का भी प्रयास करता है। स्त्री जो परिवार की एक महत्त्वपूर्ण इकाई होती है। स्त्री ही परिवार के संचालन और परिवार के विकास में योगदान देती है। इसी बात को ध्यान में रख कर उपन्यासों में स्त्री की पारिवारिक छवि की ओर विशेष ध्यान दिया गया। घर के वो सभी काम जो एक स्त्री की जिम्मेदारी के होते है उनका क्रियान्वयन एक स्त्री को किस रूप में करना चाहिए इस ओर ध्यान देने का प्रयास किया गया। भाग्यवती की परवरिश इस रूप में की गई कि विपरीत परिस्थिति में भी परिवार का संचालन सही रूप में कर सके। हिन्दी के आरंभिक उपन्यासों में स्त्री केंद्रित या कहे स्त्री शिक्षा से संबंधित जितने भी उपन्यास लिखे गए सभी उपन्यासों में स्त्री की एक आदर्श छवि को ही दिखाने का प्रयास किया गया। समाज में स्त्री शिक्षा की जागृति के साथ साथ स्त्री की एक आदर्श छवि को भी निर्मित किया गया और इस कार्य में उपन्यासों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उपन्यासों में स्त्री जीवन के विकास क्रम को जानने और समझने के क्रम में भाग्यवती उपन्यास एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में दिखाई पड़ता है।

---

[2]श्रद्धाराम फिल्लौरी, भाग्यवती, (सं-मधुरेश),यश पब्लिकेशन, संस्करण-2018, भूमिका, पृ-9

[3] गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2020, पृ. 32

[4] श्रद्धाराम फिल्लौरी, भाग्यवती उपन्यास, पृ-28

[5] वही, पृ-59

[6] वही, पृ-25